ध्यान-कक्ष

समभाव-समदृष्टि का स्कूल

Symbol of oneness

DHYAN-KAKSH

SCHOOL OF EQUANIMITY & EVEN-SIGHTEDNESS

आत्मनियंत्रण
आत्मसंयम

सतयुग की पहचान है यह, मानवता का स्वाभिमान है यह

SATYUG DARSHAN TRUST (REGD.)

मार्गदर्शक बल
(Guiding force)

सतवस्तु का कुदरती ग्रंथ

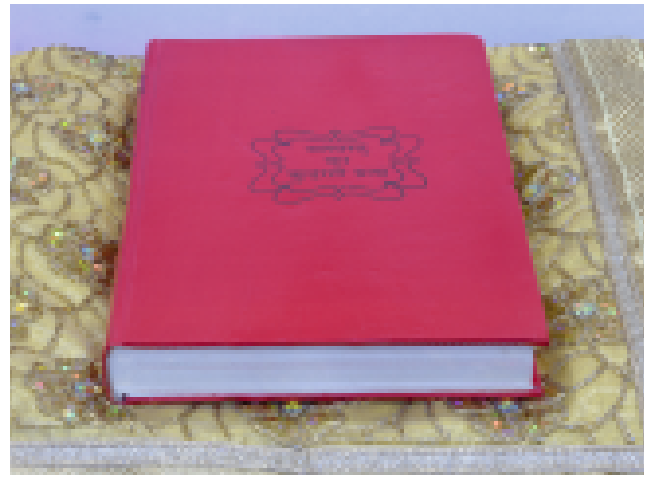

पढ़ो, समझो व अमल में लाकर
श्रेष्ठ मानव बन जाओ।

इसे पढ़ने के लिए इस QR Code को स्कैन करें।

प्रकाशक
सतयुग दर्शन ट्रस्ट (रजि.)
"वसुन्धरा" ग्राम भूपानी–लालपुर रोड फरीदाबाद–121002 (हरियाणा)
ई–मेलः info@satyugdarshantrust.org | website: www.satyugdarshantrust.org
© सर्वाधिकार सुरक्षित सतयुग दर्शन ट्रस्ट (रजि.) | ISBN : 978-93-85423-66-6

प्रथम संस्करण | जुलाई, 2024

साडा है सजन राम, राम है कुल जहान

अर्थात्

ईश्वर हमारा मित्र/प्रियतम सर्वव्यापक है,

उसी को जानो, मानो व वैसे ही गुण अपनाओ।

शब्द है गुरु, शरीर नहीं है,

अर्थात्

ज्ञानी को नहीं, ज्ञान को अपनाओ और

निमित्त में नहीं नित्य में श्रद्धा बढ़ाओ।

इस पर सुदृढ़ता से डटे रह,

इस अटल सत्य पर स्थिर बने रहो

ओ३म् अमर है आत्मा,

आत्मा में है परमात्मा

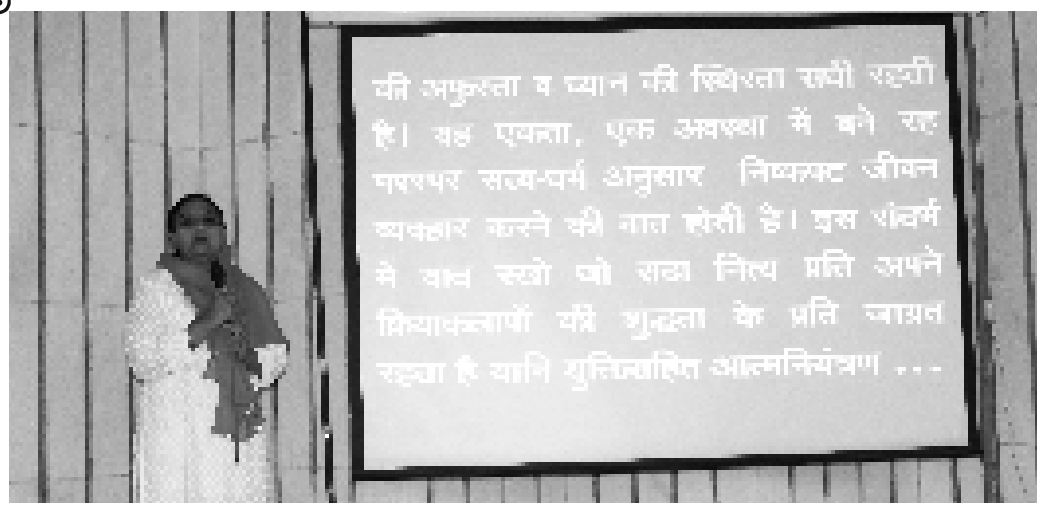

सच्चाई
धर्म
सम

आत्मनियंत्रण/आत्मसंयम (भाग 1)

भूमिका

सजनों व्यक्ति का जीवन सद्-असद्, अच्छाई-बुराई, शुभ-अशुभ वृत्तियों का संगम है। इस संदर्भ में जहाँ इन्द्रिय भोगों और भौतिक आकर्षणों की तरफ मन की प्रवृत्ति, जीवन धारा के ऊपर से नीचे यानि पतन की ओर सहज बहाव का लक्षण है, वहीं परमार्थ/अध्यात्म की ओर मानसिक झुकाव का होना, व्यक्तिगत परिष्करण द्वारा, जीवन धारा के, आत्मोत्कर्ष की तरफ प्रशस्त होने का शुभ सूचक है। निश्चित रूप से जीवन को विकार व प्रमाद मुक्त बना, ऊँचा उठाने के लिए, वृत्तियों को विशुद्ध/सात्विक बनाने के लिए, अपने आचार-विचार व व्यवहार को उन्नत, सुसंस्कृत व परिष्कृत करने के लिए, सांसारिक सम्बन्धों को शांतिपूर्वक निभाने के लिए, अपनी शारीरिक, मानसिक व आत्मिक शक्ति को अगाध बनाने के लिए व जीवन के हर क्षेत्र में सफलता पाने के लिए, मन व इन्द्रियों की प्रवृत्ति को, परम पुरुषार्थ द्वारा, निग्रहित यानि कन्ट्रोल कर, परमतत्व में नियोजित करना अनिवार्य है। इसी परम लक्ष्य की सिद्धि के लिए आत्मनियन्त्रण/आत्मसंयम/आत्मानुशासन या कहो तो इन्द्रिय-निग्रह की महत्ता है। इसी संदर्भ में आइए जानते हैं आत्मसंयम के बारे में:-

आत्मसंयम - अभिप्राय

आत्मसंयम का अर्थ है सम्यक् रूप से अपने मन तथा इन्द्रियों पर नियन्त्रण। इस आशय से यह चित्तवृत्तियों यानि चित्त की अवस्था या गति का निरोध अर्थात् नाश कर, मन व इन्द्रियों को बुरे कामों/बातों/आदतों की ओर जाने से रोकने की या वश में करने की क्रिया है। जैसा कि कहा भी गया है:-

संयम तो है वश में रखने की क्रिया,
हाँ हाँ हाँ हाँ, हाँ जी बुरी बातों से बचने की क्रिया
सच तो यह है संयम ही है,
मानव को मानवता प्रदान करने की क्रिया

यदि स्वास्थ्य व आचार-व्यवहार की दृष्टि से देखें तो यह हानिकारक भोजन/कार्यों/दोषों/पापों/बुराईयों/विषय-वासनाओं/विकारों से अलग रहने का परहेज़ है यानि अशुभ प्रवृत्ति का त्याग करने का नाम है। अन्य शब्दों में संयम मन की एकाग्रता व शांति के निमित्त लगाए जाने वाला प्रतिबंध है तथा चित्त को धर्म में स्थिर रखने वाले कर्मों का साधन है। इस के द्वारा मनुष्य की शक्तियों का केन्द्रीकरण होने लगता है, इसीलिए इसे योग में ध्यान, धारणा तथा समाधि का साधन माना गया है। जैसा कि कहा भी गया है:-

संयमित प्रयत्न ही योग साधना में,
सफलता की कुंजी है
संयमित आचार, विचार, व्यवहार ही तो,
मानवता की पूंजी है

सच्चा आत्मनियन्त्रण

स्पष्ट है कि अपने शरीर, मन, इंद्रियों व चित्त वृत्तियों का नियमन व नियन्त्रण ही आत्मसंयम या आत्मनियंत्रण कहलाता है। इस आत्मनियन्त्रण का प्रारम्भ होता है - आत्मा के अध्ययन से यानि आत्मिकज्ञान प्राप्ति द्वारा अपने यथार्थ को जानने का प्रयत्न करने से। इस संदर्भ में जानो कि इन्द्रियाँ शरीर से परे अर्थात् सूक्ष्म और बलवान हैं। इन्द्रियों से परे है मन। इस मन से परे बुद्धि है और जो बुद्धि से परे है, वह सर्वशक्तिशाली आत्मा है। यही हमारा वास्तविक स्वरूप है। अपने इस सर्वशक्तिमान स्वरूप का बोध रखने वाला ही, सम, संतोष, धैर्य, सच्चाई, धर्म जैसे सद्‌गुणों के बलबूते पर, विषयों के प्रति मन में उठने वाली काम/कामनाओं का विरोध कर, अपनी चित्तवृत्तियों को निग्रहित कर सकता है और इन्द्रियों की स्वच्छंद प्रवृत्ति का दमन/नाश कर, जितेन्द्रिय यानि अपना शासक आप बन, समवृत्ति हो सकता है। यही सजनों सच्चा आत्मनियन्त्रण है। आत्मसंयमी ही अपने

आचार-व्यवहार को शास्त्रविहित् नीति-नियमों व मर्यादा की सीमा में साध, निष्काम कर्म करने के योग्य बन सकता है और ब्रह्मज्ञ बन मोक्ष प्राप्त करने का उचित अधिकारी सिद्ध हो सकता है।

आत्मसंयम की इस अपार महत्ता के दृष्टिगत ही सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में ब्रह्मऋषि की महान पदवी पाने हेतु ऋषि विश्वामित्र का उदाहरण देते हुए कहा गया है:-

सजनों काम क्रोध लोभ मोह अहंकार को भी जीतना है। इन सब में बड़ा है काम। काम का परिवार है कामना। काम की दोस्ती है क्रोध से। यत्न कर कर के सजन हार गये। लेकिन जब कोई कामना पूरी नही हुई तो क्रोध उत्पन्न होता है। लोभ का दोस्त है मोह, अगर किसी ने लालच दिखाया, तो उस के साथ सजनों का मोह पड़ जाता है। सब सजनों को मालूम ही है कि अहंकारता कुल नाशक है जिस सजन को ब्रह्म से ब्रह्म होने की चाहना है तो उसने सम सन्तोष धैर्य सच्चाई धर्म की पढ़ाई समाप्त करने के बाद फिर काम को जीतना है। आप सब सजन पढ़ चुके हैं कि ऋषि विश्वामित्र, राज ऋषि, श्रेष्ठ ऋषि, उत्तम ऋषि और महाऋषि तो हो गये लेकिन ब्रह्म ऋषि न हो सके। वह यत्न तो लड़ाते थे लेकिन फिर गिर जाते

थे। आखिर में जब उन्होंने काम को जीता तो फिर वह ब्रह्म ऋषि की पदवी पर पहुँचे। इसलिए सजनों को चाहिए कि गृहस्थ आश्रम में रहते हुए आहिस्ता आहिस्ता अपनी इन्द्रियों पर कन्ट्रोल करके काम पर फतह पानी है।

(सतवस्तु का कुदरती ग्रन्थ, सप्तम सोपान, भाग-तृतीय, बुधवार का दूसरा बोर्ड, कीर्तन न0 1)

सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ से उद्धृत इस गद्यांश में, परमपद प्राप्ति हेतु 'इन्द्रियनिग्रह' की महत्ता को, बखूबी चंद शब्दों में बड़े ही सुंदर ढंग से अभिव्यक्त किया गया है। साथ ही यह भी समझाया गया है कि आत्मनियन्त्रण में सबसे बड़ी बाधा है 'काम' (Lust/Longing) जो इन्द्रियों की अपने-अपने विषयों की ओर प्रवृत्ति का द्योतक है व जिसका परिवार है कामना। जानो कि अग्नि के समान भोगों से न तृप्त होने वाले इस काम ने आत्मज्ञान को अपनी माया से आवृत्त कर रखा है और इसी काम में ही क्रोध, लोभ, मोह व अहंकार का अंतर्भाव है। अतः इस काम पर विजय पाना आवश्यक है। इसी संदर्भ में जैसा कि कहा गया है 'अपनी इन्द्रियों पर कन्ट्रोल करके काम पर फतह पानी है', तो समझते हैं इन्द्रिय निग्रह की प्रक्रिया को:-

इन्द्रियाँ व उनके विषय

जानो इन्द्रियों (Senses) से तात्पर्य - शरीर के उन अवयवों यानि अंगों से है जिनके द्वारा विषयों का यानि बाहरी पदार्थों के भिन्न-भिन्न गुणों का भिन्न-भिन्न रूपों में अनुभव, बोध या ज्ञान होता है तथा जिनके द्वारा किसी भी प्रकार का कर्म सम्पन्न किया जाता है तथा विषय का अर्थ है, वे जिसे इन्द्रियाँ ग्रहण करती हैं। जैसे नाक गंध को ग्रहण करती है। तो यहाँ गंध नाक का विषय है। इसी तरह आँख का विषय रूप, कान का विषय शब्द, जिह्वा का विषय रस और त्वचा का विषय स्पर्श है।

इन्द्रियों के प्रकार एवं संख्या

इन्द्रियाँ दो प्रकार की हैं। एक - ज्ञानेन्द्रियाँ और दूसरी - कर्मेन्द्रियाँ। जो विषयों का बोध कराती हैं उन्हें ज्ञानेन्द्रियाँ कहते हैं तथा जो कर्म सम्पन्न करती हैं उन्हें कर्मेन्द्रियाँ कहते हैं। ज्ञानेन्द्रियाँ पाँच हैं यथा आँख, कान, नाक, जिह्वा और त्वचा। कर्मेन्द्रियों की सँख्या भी पाँच है यथा हाथ, पैर, वाणी, गुदा, उपस्थ/लिंग। इन 10 इन्द्रियों के अतिरिक्त हमारे वेद शास्त्रों में मन, जो सुख-दुःखादि के ज्ञान का साधन है तथा जिससे संकल्प-विकल्प, इच्छा, विचार व अनुभव होता है, को उभयेन्द्रिय (अर्थात् जिसमें ज्ञानेन्द्रिय व कर्मेन्द्रिय दोनों के गुण हों) माना गया है। इस प्रकार इसे मिलाकर इन्द्रियों की कुल संख्या 11 है। ज्ञात हो कि संशयात्मक

यह मन आंतरिक व्यापार में स्वतन्त्र है पर बाह्य व्यापार में इंद्रियाँ परतंत्र हैं। इन्द्रियों में सबसे प्रभावशाली आँख और कान हैं, शेष का प्रभाव सीमित है।

इन्द्रियों, मन व बुद्धि की कार्य प्रणाली

स्पष्ट है कि मनुष्य का शरीर अपनी क्रियाक्लापों का सुचारू ढंग से संचालन करने के लिए इन्द्रियों पर आश्रित है। इसी संदर्भ में आओ अब ध्यान से समझें कि पंचभूतों से निर्मित शरीर में रहते हुए, हमारी इन्द्रियाँ, मन व बुद्धि के सहयोग से किस प्रकार कार्य करती हैं:-

1. सर्वप्रथम ज्ञात हो, पाँचों विषय यथा रूप, रस, गंध, शब्द व स्पर्श बाह्य हैं। इनकी इन्द्रियों से स्वतन्त्र सत्ता जगत में है।

2. ज्ञानेन्द्रियाँ, मन के सहयोग से, इन बाहरी विषय का चित्त में विधान यानि व्यवस्था/सर्जन (Legislation/ Creation) करती हैं। जो विषय मनोनुकूल होते हैं, इन्द्रियाँ उनसे जुड़ती हैं, उनकी तरफ खींची चली जाती हैं और जो मनोनुकूल नहीं होते, इन्द्रियाँ उनसे दूर हट जाती हैं। उदाहरणस्वरूप रूप सुन्दर है तो आँखें उधर लगी रहती हैं, यदि विकराल और डरावना है तो आँखें उन की तरफ से मुख मोड़ लेती हैं।

3. चित्त में प्रतिष्ठित विषयों के मानसिक रूपों का विश्लेषण (Analysis) और सामान्यीकरण

(Generalization) बुद्धि जो हमारी सोचने-समझने और निश्चय करने की शक्ति है, वह करती है।

4. इन्द्रियाँ - चाहे शरीर के विभिन्न अंगों में स्थित हैं, परन्तु वे मन और बुद्धि के सहारे ही मनुष्य को ज्ञानसम्पन्न बनाती हैं।

5. इस परिप्रेक्ष्य में यदि मन और बुद्धि, इन्द्रियों का साथ न दें तो वे निरर्थक सिद्ध होती हैं। जैसे - आँख का काम है देखना। यदि आँख के व्यापार के साथ मन का सहयोग न हो तो आँख देखते हुए भी न देखेगी। उदाहरणस्वरूप यदि कोई परिचित आदमी हमारे पास से गुज़र रहा है और हमारा मन भीतर ही अपनी उधेड़बुन में लगा हुआ है तो वह आदमी दिखते हुए भी दिखाई नहीं पड़ेगा। इसी को हम व्यवहार में कहते हैं कि हमारा ध्यान नहीं गया।

6. इस तरह इन्द्रियों को, विषयों और मन-बुद्धि के बीच साधन माना गया है और उनसे अधिक महत्त्व मन और बुद्धि को दिया गया है। ऐसा इसलिए क्योंकि मन और बुद्धि के अभाव में इन्द्रियों के व्यापार कोई मायने नहीं रखते।

7. हमारी कर्मेन्द्रियाँ अपने व्यापार और प्रवृत्ति के लिये मूलतः ज्ञानेन्द्रियों पर निर्भर हैं। इसीलिए कर्मेन्द्रियों की तुलना में ज्ञानेन्द्रियों का महत्त्व प्राथमिक माना जाता है। कर्मेन्द्रियाँ भी ज्ञानेन्द्रियों की तरह वही

करती हैं जो मन करवाना चाहता है या बुद्धि जैसा उन्हें निर्देश देती है। उदाहरणतः लिखने का काम हाथ करते हैं और चलने का पैर, लेकिन लिखने और चलने में हाथ-पैर तब तक प्रवृत्त नहीं होते जब तक बुद्धि निर्देश नहीं देती।

इस प्रक्रिया को समझने के उपरान्त निष्कर्ष यह निकलता है कि इन्द्रियों से पूर्व, मन को वश में करने की अधिक आवश्यकता है क्योंकि मन ही इन्द्रिय विषयों का चिन्तन करता है और इन्द्रियों को उनमें अनुरक्त करता है। तभी तो सजनों सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में कहा गया हैः-

मन शैतान शैतानी करे, भोगे विषय विकार।
मौत आवाज़ां मारदी, लश्कर होया तैयार।।

(सतवस्तु का कुदरती ग्रन्थ, द्वितीय सोपान, कीर्तन न0 80)

इस प्रकार मन ही विषयों का भोक्ता है, आत्मा नहीं। इन्द्रियां तो मात्र साधन हैं, माध्यम हैं और उपकरण हैं जो मन के आदेशों का पालन करती हैं। असली कर्ता-धर्ता तो मन ही है। इस संदर्भ में सतवस्तु का कुदरती ग्रन्थ हमें और स्पष्टता से समझा रहा हैः-

पंज ज्ञान इन्द्रियां पंज कर्म इन्द्रियाँ,
रथ ते मन असवार
अंजनी लाल सानूं मिल गए,

मन नूं लिया ने संवार

(सतवस्तु का कुदरती ग्रन्थ, द्वितीय सोपान, कीर्तन न0 5)

मनोनिग्रह

स्पष्ट है, मन का निग्रह होने के पश्चात् ही इन्द्रियों का निग्रह संभव है। चंचल मन का निग्रह, यह कोई सहज काम नहीं अपितु अभ्यास (Practice) व वैराग्य (Dispassion/Detachment) का विषय है तथा इसके लिए निरंतर पुरुषार्थी बने रहने की आवश्यकता है। यहाँ अभ्यास से तात्पर्य, किसी कार्य में दक्षता/विशेषज्ञता प्राप्त करने के लिए, उसे कार्य में दत्त चित्त होकर पूर्ण सामर्थ्य और उत्साह के साथ लगे रहने या उसे बार-बार करते रहने से है। लगातार अभ्यास करने से यानि एक ही विषय का बार-बार चिंतन करने से मन व मस्तिष्क एकाग्र हो जाता है। इस प्रकार सतत् प्रयत्न अभ्यास का स्वरूप है और चित्तवृत्तियों का निरोध अभ्यास का प्रयोजन। अभ्यास से कोई कार्य दुष्कर नहीं रहता। इसके लिए तो बस श्रद्धा और विश्वास के साथ, धैर्यपूर्वक निरंतर यानि उठत-बैठत, स्वप्न-जाग्रत, क्रिया का पुनः पुनः अनुशीलन करने की आवश्यकता होती है। इस के अतिरिक्त आत्मज्ञान/विवेक द्वारा विषयों को अनंत दुःखरूप और बन्धन का कारण समझकर उनमें पूर्णता

अरुचि के हो जाने तथा उनमें सर्वथा संग दोष के निवृत्त हो जाने का नाम वैराग्य है। सरल शब्दों में मन की वह वृत्ति जिसके अनुसार संसार की विषयवासना तुच्छ प्रतीत होने लगती है और व्यक्ति विषयभोग आदि से निवृत्त हो जाता है, वैराग्य कहलाता है। मन में वैराग्य उत्पन्न होने पर मन किसी विषय की ओर नहीं जाता और चित्त में कोई वृत्ति नहीं उत्पन्न होती। फलतः चित्त निर्मल, शांत व प्रसन्न हो जाता है और आत्मशुद्धि उत्तमोत्तम प्रतीत होती है। सजनों इसी प्राप्ति के दृष्टिगत सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में सुरत रूप में दासी महाबीर जी से प्रार्थना करती हैः-

वैराग दी हनेरी चला ही दियो,
सूरज अगों कंध हटा ही दियो।
दासियां नूं चरणां विच बिठा ही दियो,
मेरे महाबीर प्यारे जी।।

(सतवस्तु का कुदरती ग्रन्थ, प्रथम सोपान, भजन न0 25)

इस संदर्भ में भक्ति-भाव द्वारा यानि मूलमंत्र आद् अक्षर ओ३म् के सिमरन द्वारा, जब ख़्याल ध्यान वल व ध्यान प्रकाश वल कर, चित्त की वृत्तियों को आत्मस्वरूप में ठहराने का यत्न किया जाता है, तब मन अन्य विषयों में राग होने के कारण उनकी ओर दौड़ता है। विषयों में राग सकाम कर्मों से होता है, इसलिए विषयों से वैराग्य

प्राप्त करने के लिए कर्मों में निष्कामता को ध्यानपूर्वक साधना पड़ता है अर्थात् इन्द्रियों की भोग-प्रवृत्ति का दमन कर, हर कर्म, फल की इच्छा त्याग कर, निष्कामता व सर्वहितकारिता के भाव से सम्पन्न करना पड़ता है। जैसा कि कहा भी गया है:-

साधना करो ते लावो ध्यान, रस्ता पकड़ो निष्काम

(सतवस्तु का कुदरती ग्रन्थ, प्रथम सोपान, भजन न0 1)

ऐसा करने से निष्कामता का भाव, चित्त में सुदृढ़ हो जाता है यानि स्वभाव के अंतर्गत हो जाता है। परिणामस्वरूप मन उपशम हो यानि आसक्ति व तृष्णा का नाश कर, काम-वासना से मुक्त हो जाता है। मन की यह वैरागपूर्ण अवस्था समस्त क्लेशों/विपत्तियों/द्वंद्वों/भ्रमों से निवृत्ति पा, पूरी तरह से आत्मतुष्ट यानि शांत होने का सूचक होती है। इस आत्मतुष्ट अवस्था में व्यक्ति न इन्द्रियों के भोगों में आसक्त होता है, न कर्मासक्त होता है क्योंकि सभी संकल्पों का अभाव हो जाता है। यही प्राप्ति ही आत्मनियन्त्रण की कसौटी है। इस कसौटी पर खरा उतरने वाला शब्द ब्रह्म विचार धारण कर, अपने असलियत ब्रह्म स्वरूप में लीन हो जाता है और जगत में रहते हुए उससे आज़ाद हो, विश्राम को पा जाता है।

आप भी इस मनोनिग्रह द्वारा इस विश्राममय अवस्था को पाने में सफल हों, यही हमारी शुभकामना है।

OPEN HOUSE
DISCUSSION

आत्मसंयम, भाग 2

भूमिका

सजनों हम एक साथ दो संसारों में रहते हैं। एक संसार वह है जो हमारे बाहर है, जिसकी रचना इन्द्रिय-विषय करते हैं तथा जिसे हम भौतिक जगत के नाम से जानते हैं। दूसरा संसार हमारे चित्त के भीतर है जिसकी रचना इन्द्रियों की मदद से मन करता है और जिसे मानसिक जगत के नाम से जाना जाता है। भौतिक प्रपंच बाहर से और मानसिक प्रपंच अन्दर से हमें बाँधे या घेरे रखते हैं। इस संदर्भ में हमारे भीतर जो मानसिक प्रपंच है यानि चित्तवृत्ति है, उसका निरोध योग कहलाता है और भौतिक प्रपंच जो बाहर है व संसारी विषयों से रचित है, उनसे इन्द्रियों का निरोध करने का नाम इन्द्रिय-निग्रह कहलाता है।

इन्द्रिय/मनोनिग्रह - आत्मसाक्षात्कार हेतु आवश्यक

यहाँ समझने की बात यह है कि इस जीवनयात्रा के दौरान कभी तो हमारी इन्द्रियाँ संसारोन्मुखी हो जाती हैं और कभी अन्तर्मुखी यानि बाह्य संसार के मानसिक रूप में खोई रहती हैं। इसे मानस या हृदय ग्रन्थि यानि अविद्या रूपी संसार का बंधन भी कहते हैं। इन्हीं दोनों

के बीच उलझा हुआ अचेतन आदमी पल-पल जन्मता-मरता रहता है। इस प्रकार न जाने वह कितनी बार जन्मता-मरता है परन्तु बाहरी और भीतरी बन्धन उसे आसानी से नहीं छोड़ते। बाहरी सांसारिक मोह बन्धन से मुक्ति के लिए ही इन्द्रिय-निग्रह पर बल दिया जाता है, पर भीतर के बन्धन से मुक्ति भी उतनी आवश्यक होती है। इसलिए जीव की दोनों से मुक्ति के लिए दो भिन्न प्रकार के विधान हैं। इस विषय में सजनों सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में कहा गया है:-

पंज ज्ञान इन्द्रियां पंज कर्म इन्द्रियां
विच है ख्याल तुम्हारा।
मनुराज नूं छड के सजनो टप्पा मारो ज्ञान
इन्द्रियां दा, पावो स्थान हमारा।।

(सतवस्तु का कुदरती ग्रन्थ, पंचम सोपान,
कीर्तन न0 1)

आशय यह है कि जिस प्रकार कीचड़ से कीचड़ नहीं धुलता, आग से आग नहीं बुझती, उसी प्रकार भीतरी यानि मानस/ख़्याली जगत जिसका निर्माण मन, बुद्धि और इन्द्रियाँ मिलकर करते हैं, उसमें यह सामर्थ्य नहीं होता कि वे मनुष्य को अपने बन्धनों से मुक्त कर दें। इसके लिए तो उस एकमात्र उच्च तत्त्व को मानक

मानना पड़ता है जिसका नाम आत्मा/परमात्मा है। आत्मा/परमात्मा जैसे सर्वोच्च लक्ष्य के अभाव में इन्द्रिय-निग्रह सम्भव नहीं, इसलिए आत्मनियन्त्रण पर बल दिया जाता है। इस आत्मनियन्त्रण के सधने पर ही यानि मनमत त्याग कर व इन्द्रियों की भोग वृत्तियों का दमन कर, ख़्याल को ध्यानपूर्वक आत्मप्रकाश वल स्थित करने पर ही आत्मपद पाना सहज हो पाता है। जैसा कि सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में कहा भी गया है:-

तुहाडी ओ खातिर पंज ज्ञान इन्द्रियाँ नूं
दमन कर ख़्याल दयालु नाल जोड़िया।
मन शैतान दा मुख जगत वल्लों मोड़िया।
आत्मपद दी सजनां नूं है चाह,
ओ दयालु आ ओ दयालु आ।।

(सतवस्तु का कुदरती ग्रन्थ, सप्तम सोपान,
भाग-प्रथम, कीर्तन न0 37)

ऐसा इसीलिए भी कहा गया है क्योंकि सामान्यतः इन्द्रियाँ मन के निर्देशन में संसारोन्मुखी हो जाती हैं। नानाविध् साँसारिक विषयों में जुड़ना और उनके बोध को चित्त में संचित करना उनका स्वभाव बन जाता है। इन संचित कर्मों यानि जन्म-जन्मांतरों की वाशनाओं के बंधन से मनुष्य का छूटना फिर अत्यन्त दुष्कर हो जाता

है और वे परमतत्त्व से विमुख हो जाता है। जैसा कि सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में कहा भी गया है:-

मन मस्त हाथी चारों पासे फिराया,
वाशना इस नूं घियो पिलाया

(सतवस्तु का कुदरती ग्रन्थ, प्रथम सोपान, कीर्तन न0 46)

आशय यह है कि जगत की ओर बहती हुई इन्द्रियाँ मनुष्य को काम, क्रोध, लोभ, मोह-माया, अहंकार, राग-द्वेष, आशा-तृष्णा से इतना ग्रस्त कर देती हैं कि वह इस दुर्लभ मानव जीवन के प्रयोजन को अस्वीकारते हुए, आजीवन उन्हीं का दास बना रहता है। यह अत्यन्त दयनीय स्थिति होती है। अतः मन व इन्द्रियों के इस दासत्व से मुक्ति के लिए आत्मा-परमात्मा का यानि ईश्वर है अपना आप के सत्य का बोध अति आवश्यक होता है। इसी के लिए मनोनिग्रह व इन्द्रिय-नियन्त्रण जरूरी है।

इसके पीछे एक महत्त्वपूर्ण कारण यह भी है कि यदि साँसारिक विषयों या जगत के नानात्व यानि अनेक प्रकारों के पीछे, मन इन्द्रियों को यूँ ही भगाता रहता है तो वह हमेशा अस्थिर और चंचल बना रहता है। इस

अवस्था में मन कभी आँख के सहारे रूप की ओर भागता है, तो कभी कान के आश्रय पर शब्द की ओर भागता है जबकि आत्मा-परमात्मा के बोध, साक्षात्कार व उपलब्धि के लिए, इस प्रकार के आचरण का त्याग आवश्यक होता है। इसी तथ्य के दृष्टिगत सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में दासी सजन श्री शहनशाह हनुमान जी से प्रार्थना करते हुए कहती है किः-

मन उपशम कर देओ मेरा महाबीर,
इसने अन्दर जमा लिया डेरा महाबीर
इस मन नूं आप समझाओ महाबीर जी,
तुआडे चरणां तों जावां बलिहार महाबीर जी।

(सतवस्तु का कुदरती ग्रन्थ, प्रथम सोपान,
कीर्तन न0 17)

इस विषय में ज्ञात हो कि जब परम पुरुषार्थ द्वारा इन्द्रियाँ अपनी-अपनी जगह पर स्थिर हो जाती हैं और मन, संकल्प-विकल्प की तरंगें उठाने की प्रवृत्ति को अर्थात् चंचलता को त्याग उपशम व शांत हो जाता है, तो ही मनुष्य सर्व सर्व प्रकाश रहे अपने असलियत ज्योति स्वरूप का बोध कर पाता है और सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ अनुसार कह उठता हैः-

मन मजूर किस ने बनाया,
किसने इस नूं रथ ते बिठाया
किस ने इस नूं राज दिवाया,
किस ने इस नूं राज दिवाया
जैं मन बनाया ओ नादान मालका,
तेरी जोति हिम कुल जहान मालका
रथ उत्ते तेरी जोत नज़र आई,
जैंदी त्रिलोकी दे विच रौशनाई
मन मिटया ते होया है आनंद मालका,
तेरी जोति हिम कुल जहान मालका

(सतवस्तु का कुदरती ग्रन्थ, द्वितीय सोपान,
कीर्तन न0 60)

अंतर्मुखता का महत्त्व

इसके अतिरिक्त आत्मनियंत्रण के संदर्भ में इस बात को भी ध्यान से समझो कि व्यक्ति व्यापी चेतना यानि आत्मा और विश्व व्यापी चेतना यानि परमात्मा दोनों का ही प्रवाह बाह्य के साथ-साथ आंतरिक भी है। इस चैतन्य से जुड़ने के लिए इन्द्रियों समेत मन को अन्तर्मुखी बनाना आवश्यक है। इसीलिए वेद शास्त्रों में ब्रह्मबोध और ब्रह्म के साक्षात्कार के लिए अन्तर्मुखता को बहुत

महत्त्व दिया गया है। परन्तु यहाँ ज्ञात हो कि यह अंतर्मुखता, व्यावहारिक अन्तर्मुखता या मनोविज्ञान के अन्तर्मुखी स्वभाव से बहुत पृथक है। व्यावहारिक अन्तर्मुखता या अन्तर्मुखी स्वभाव की स्थिति में व्यक्ति बाहरी विषयों की तुलना में चित्त में स्थित विषयों के मानसिक रूपों में रमा रहता है, इसलिए विषयों के मानसिक रूपों का ग़ुलाम हो सदा तनावग्रस्त रहता है। इसके विपरीत आत्मा और ब्रह्म के साक्षात्कार के लिए जिस अन्तर्मुखता की बात हमारे धर्म ग्रन्थों में कही गई है, उसमें चित्त स्थित मानसिक रूपों का निषेध आवश्यक होता है। यह अन्तर्मुखता सही अर्थों में तभी प्राप्त होती है, जब इन्द्रियों और मन ने जो एक दुनियाँ हमारे अन्दर रची है, उसे आंतरिक तेज की अग्नि में जलाकर राख कर दिया जाये। इसी हेतु ही तो मूलमंत्र आद् अक्षर ओ३म् के अजपा जाप की महत्ता है और कहा गया है:-

ओ३म् तत्, ओ३म् सत, ओ३म् जप, ओ३म् तप
ओ३म् दा है विस्तारा, ओ३म् जपो,
जपो ओ३म् ओंकारा।

(सतवस्तु का कुदरती ग्रन्थ, सप्तम सोपान,
भाग-तृतीय, कीर्तन न0 28)

वास्तविक अन्तर्मुखता

स्पष्ट है कि बाहर जो साँसारिक विषयों की दुनियाँ है और हमारे भीतर - जो मानसिक रूप में विषयों की दुनियाँ है, दोनों से मन और इन्द्रियों को विमुख करके आत्मा-परमात्मा की ओर उन्मुख करना ही वास्तविक अन्तर्मुखता है। इस विषय में मन एवं इन्द्रियों को अन्तर्मुख यानि आत्माभिमुख बनाने के लिए ही इन्द्रिय/मनोनिग्रह की आवश्यकता है जिसके प्रति हमें जाग्रति में आना है और शास्त्रविहित् युक्ति व आचार-विचार-व्यवहार अपनाकर, आंतरिक तेजाग्नि में, अन्दर की लंका यानि विकार-प्रवृत्तियों को भस्म कर, पुनः सत्य की स्थापना करनी है। जैसा कि कहा भी गया है:-

हुन अन्दर जुड़ो जी, बैरूनी छडो वृत्ति।
बैरूनी वृत्ति विच लाभ न कोई।
अन्दरूनी वृत्ति विच प्रसन्नता होई।
हुन प्रसन्नता होई जी बैरूनी छडो वृत्ति।
हुन अन्दर जुड़ो जी बैरूनी छडो वृत्ति।

(सतवस्तु का कुदरती ग्रन्थ, सप्तम सोपान, भाग-तृतीय, बुधवार का दूसरा बोर्ड, कीर्तन न0 1)

इस संदर्भ में बेहतर यही है कि बलपूर्वक मन व इन्द्रियों का दमन करने के स्थान पर उनका सतत् और

आहिस्ते-आहिस्ते युक्तिसंगत निरोध किया जाए। कारण यह है कि यदि आदमी को मकान की छत पर जाना है, तो सही तरीका यह है कि वह नीचे से पहली सीढ़ी से चढ़ना शुरु करे, फिर दूसरी, फिर तीसरी, क्रमवार चढ़ने का फल यह होगा कि वह निर्धारित लक्ष्य पर सुरक्षित पहुँच जायेगा। अतः मन व इन्द्रियों को निग्रहित करने के लिए सतत् अभ्यास और वैराग्य यानि विषयों से अनासक्ति, अनिवार्य है। इस विषय में जैसे कहा भी गया है कि 'जिस प्रकार कछुआ अपने अंगों को भीतर समेट लेता है, उसी प्रकार हमें भी निरन्तर अभ्यास पूर्वक अपने मन व इन्द्रियों को, जिनकी आदत है बाहरी विषयों में रमना, अपनी जगह पर स्थित रखने में सक्षम बनना है'। ज्ञात हो, बिना मनो एवं इन्द्रिय-निग्रह के प्रज्ञा यानि बुद्धि स्थिर नहीं होती। इन्द्रियों पर पूरा अधिकार हो जाने पर ही प्रज्ञा स्थिर होती है और इंसान के अन्दर सब कार्य भली-भांति समझबूझ कर करने की शक्ति अथवा क्षमता पैदा होती है और वह विद्वान कहलाता है।

पूर्ण-निग्रह की स्थिति

इस विवेचना के आधार पर स्पष्ट होता है कि बाहरी विषयों से इन्द्रियों को अलग कर लेना मात्र ही इन्द्रिय-

निग्रह नहीं है क्योंकि ऐसा हो सकता है कि व्यक्ति अपनी आँखों से चाहे बाहर का रूप न देखे, लेकिन अपने भीतर उन्हीं का चिन्तन करता रहे। अतः निग्रह बाहर और भीतर दोनों का होना चाहिए। इसीलिए तो जो व्यक्ति इन्द्रियों के बाह्य व्यापार को बलपूर्वक रोके रखता है, पर अपने मन के भीतर उन्हीं का चिन्तन करता है, वह मिथ्याचारी और पाखण्डी कहलाता है। याद रखो इन्द्रिय-निग्रह तभी पूर्ण निग्रह कहलाता है जब बाहर-भीतर, मन और इन्द्रियों का एक साथ हो। इस विषय में स्पष्टता देते हुए सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में कहा गया है:-

पंज ज्ञान इन्द्रियाँ, पंज कर्म इन्द्रियाँ जित के ते,
मन जितिया जग जितिया जान सजनों
जित लिया उस कुल जहान सारा,
उन्हां दा दुनियां ते हो गया नाम सजनों।।

सजनों यह है पूर्ण निग्रह की स्थिति।

(सतवस्तु का कुदरती ग्रन्थ, तृतीय सोपान,
कीर्तन न0 33)

निष्काम साधना

इस पूर्ण निग्रहित स्थिति को प्राप्त करने हेतु ध्यानपूर्वक सतत् साधना करो। यहाँ साधना से तात्पर्य

किसी कर्मकांडयुक्त साधारण साधना से नहीं है, क्योंकि शास्त्र कहता है:-

कर्मकांड करो कई कई साधना, न पाए मन विश्राम।
पकड़ो रस्ता निष्काम, पकड़ो रस्ता निष्काम।।
किसे तरह करिए साधना, किसे तरह तरह दा ध्यान।
रस्ता पकड़ो निष्काम, रस्ता पकड़ो निष्काम।।

(सतवस्तु का कुदरती ग्रन्थ, प्रथम सोपान, भजन न0 1)

अर्थात् हर प्रकार की कामना, वासना, आसक्ति व इच्छा से रहित होकर, एकाग्रचित्तता से अपने ध्यान यानि चित्त की ग्रहण करने या बोध कराने वाली वृत्ति/शक्ति को आत्मस्वरूप में ठहराने का अभ्यास करो। इस तरह कर्मफल की इच्छा का पूरी तरह से त्याग कर व सिद्धि-असिद्धि में समान भाव रखते हुए, ख़्याल को ध्यान वल व ध्यान को प्रकाश वल जोड़ो और मन को प्रभु में लीन कर लो।

ऐसा करने पर ही हर कर्म नीति अनुसार अकर्त्ता भाव से परिपूर्णतया करते हुए फल प्राप्ति के प्रति अनासक्त बने रह पाओगे और सुख-दुःख, राग-द्वेष, मान-

अपमान, रोग-सोग लाभ-हानि, हार-जीत आदि द्वन्द्वों के प्रभावों से मुक्त हो अपने कर्त्तव्यों का सम्यक् निर्वाह करते हुए कर्तापन के अभिमान से मुक्त हो जाओगे और कह उठोगेः-

ओथे संयोग कहाँ और वियोग कहाँ,
ओथे रोग कहाँ और सोग कहाँ।
जेहड़े मन मन्दिर प्रकाश करेंदे ने,
ओथे खुशी कहाँ और ग़मी कहाँ।

(सतवस्तु का कुदरती ग्रन्थ, सप्तम सोपान,
भाग- द्वितीय, कीर्तन न0 9)

ज्ञात हो जब तक कर्त्ता भाव है, तब तक ही अहंकार है, उसकी अभिव्यक्ति है, कर्म-अकर्म दोनों हैं। यदि यत्न करके कर्त्ता भाव को ही शनैः शनैः मिटा दिया जाए और प्रभु समर्पित सब कार्य निष्काम भाव से किए जाएं तो बिना किसी यत्न के ही आत्मनियन्त्रण हो जाता है। इसीलिए तो सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में कहा गया हैः-

मैं नहीं, मैं नहीं, मैं नहीं मैं नहीं,
इक तूं इक तूं इक तूं इक तूं
तूं ही तूं, तूं ही तूं तूं ही तूं तूं ही तूं

(सतवस्तु का कुदरती ग्रन्थ, द्वितीय सोपान,
कीर्तन न0 5)

सच्चा आत्मनिग्रही

इस तथ्य के दृष्टिगत ज्ञात होता है कि काम जनित चंचलता ही वर्तमान युग में मानव को अनियंत्रित कर पथ-भ्रष्ट करती है, पर एक बुद्धिमान सदाचारी व्यक्ति इंद्रिय, मन और बुद्धि को वश में रखकर इनका निरोध कर लेता है जिससे उसके वास्तविक व्यक्तित्व का सर्वांगींण विकास होता है। अन्य शब्दों में विश्व के नाना आकर्षणों के बीच जो व्यक्ति अपनी आंतरिक शक्ति के द्वारा अपनी इन्द्रियों के पीछे न भागकर, लोभ लालचों में नहीं फँसता और संयमी बना रहता है, वास्तव में वही सच्चा आत्मनिग्रही कहलाता है और पुरुष से महापुरुष बनने का साहस दर्शा पाता है। इस तरह हृदय में स्थित सम्पूर्ण कामनाओं का समूलतः नाश करने वाला वह अमरधर्मा मनुष्य अमर हो जाता है यानि इसी मनुष्य योनि में परब्रह्म का भली भान्ति साक्षात् अनुभव कर लेता है।

निष्कर्ष

आप भी यदि आत्मज्ञान से उत्पन्न परमतोष व अखंड शान्ति प्राप्त करना चाहते हो तो दृढ़ता से परमतत्व की परायणता यानि प्रभु परायण होकर तमाम कर्मों के सुख-दुःख रूपी फलों को, उसके हुक्म यानि आज्ञा पर

छोड़ कर निष्काम भाव से सर्व हितकारी कर्म करने में प्रवृत्त हो जाओ। जानो इसी से ही आन्तरिक दोषों व दुष्ट वासनाओं का अन्त होगा तथा हृदय में निर्मल भाव-भावनाएँ पनपेंगी व बुद्धि स्थिर होगी। इसी से ही आत्मस्वरूप में स्थिति होगी तथा कर्त्तापन के अभिमान से मुक्ति मिलेगी। इसी के ही द्वारा वृत्ति-स्मृति व स्वाभाविक पोशाक निर्मल और निश्चल होगी। परिणामतः सत्यता से शाश्वत धर्म पर बने रहना संभव हो जाएगा और जीवन के परम लक्ष्य यानि मोक्ष को पा, अचल शान्ति की प्राप्ति होगी। सो निष्कामता को ही जीवन जीने का असली तरीका मान व इसी में ही जीवन की सच्ची सफलता और सार्थकता जान इस सुखद पथ पर आत्मविश्वास के साथ कदम बढ़ाओ और परोपकारी नाम कहाओ। ए विध् लोक-परलोक में यश-कीर्ति प्राप्त कर अमीरों के अमीर बन जाओ और विश्राम को पाओ। जैसा कि कहा भी गया है:-

निष्काम रस्ते ते आना रे दर्शन हमारा पाना रे,
निष्काम रस्ता है बड़ा सुखाला,
फकीरपना हटाना रे, हाँ दर्शन हमारा पाना रे।।

(सतवस्तु का कुदरती ग्रन्थ, पंचम सोपान,
कीर्तन न0 5)

Learn the science of inner dimensions

at **Dhyan-Kaksh**

School of Equanimity & Even-sightedness

विषय

ध्यान-कक्ष

- ध्यान-कक्ष यानि समभाव-समदृष्टि का स्कूल (परिचय)

आत्मज्ञान

- आत्मज्ञान
- आत्मज्ञानी की पहचान
- आत्मिक ज्ञान के लिए पहली आवश्यकता
- आत्मिक ज्ञान एवं भौतिक ज्ञान में अंतर
- आत्मिक ज्ञान प्राप्ति से लाभ

शरीर/प्राण/भाव/दृष्टि को सम रखना

- शीश अर्पण व शारीरिक समता साधने का महत्त्व
- प्राण को सम रखने की कला
- भाव
- समभाव
- समभाव साधना
- समदृष्टि
- समबुद्धि एंव समभाव-समदृष्टि का व्यावहारिक रूप

अपनी पहचान

- निज मानव स्वरूप की पहचान
- यथार्थ ब्रह्म स्वरूप की पहचान
- ब्रह्म
- शब्द ब्रह्म
- ओ३म शब्द की महानता व महत्ता

समभाव-समदृष्टि का कायदा

- जिह्वा स्वतन्त्र अर्थात् आहार एवं वाणी संयम
- संकल्प स्वच्छ
- दृष्टि कंचन

आत्मविजय

- आत्मनिरीक्षण
- आत्मसंयम/आत्मनियन्त्रण (भाग-1 और-2)
- आत्मानुशासन एवं आत्मविजय

विचार एवं विवेक

- विचार
- विवेक
- विवेक जाग्रति
- विवेकशील मानव की पहचान

Offline classes and activities

Every Sunday from 12.45 pm to 1.45 pm

at Dhyan-Kaksh, Satyug Darshan Vasundhara,
Bhopani-Lalpur Road, Greater Faridabad - 121002

Online classes can be viewed at

आप इस विषय का वीडियो निमलिखित लिंक
(QR code) पर स्कैन करके देख सकते हैं ।

View this class by scanning this QR code link

आत्मनियंत्रण

आत्मसंयम

Initiatives of Satyug Darshan Trust (Regd.) on Humanity and Ethics

INTERNATIONAL HUMANITY OLYMPIAD
www.humanityolympiad.org

HUMANITY DEVELOPMENT CLUB
www.awakehumanity.org

For FREE workshops in your School, College and groups

Scan for Dhyan-Kaksh Social Media

Contact

Mobile : +91 8595070695

Email: contact@dhyankaksh.org

Website: www.dhyankaksh.org

Scan for Dhyan Kaksh Location

https://bit.ly/3v4O8B2